द्रव्यसंग्रह महामण्डल विधान

लेखक

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., पी-एच.डी., डी-लिट्

प्रकाशक

पण्डित टोडरमल सर्वोदय ट्रस्ट

ए-4, बापूनगर, जयपुर-302 015

फोन : 0141-2707458, 2705581

E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

प्रथम संस्करण : 5 हजार
(7 दिसम्बर, 2018 ई.)

मूल्य : **7 रुपये**

प्रस्तुत संस्करण में कीमत करनेवाले दातारों की सूची

1. श्री अभयकरणजी सेठिया, सरदारशहर	5,000
2. शास्त्री द्वितीय वर्ष 2018-19 (बेच-39) जयपुर	2,100
2. श्री खेमचन्दजी जैन सर्राफ, दमोह	1,100
3. श्रीमती पुष्पलता जैन (जीजीबाई) ध.प. श्री अजितकुमारजी जैन, छिन्दवाड़ा	1,100
4. श्री ताराचन्दजी जैन सोगानी, जयपुर	1,100
5. श्री नेमिचन्द चंपालाल भोरावत चै. ट्रस्ट (सेमारीवाले) हस्ते सुरेश भोरावत, उदयपुर	1,100
6. श्री अतुलकुमारजी जैन, ललितपुर	1,000
7. श्रीमती मैनादेवी ध.प. श्री नरेन्द्रकुमारजी जैन नावल्टी टेन्ट हाऊस, जयपुर	500
कुलयोग	**13,000**

टाइपसैटिंग :
त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स,
ए-4, बापूनगर, जयपुर

मुद्रक :
रैनवो ऑफसेट प्रिंटर्स
बाईस गोदाम, जयपुर

अनुक्रमणिका

1.	ग्रन्थ और ग्रंथकार	4
2.	प्रक्षाल पाठ	7
3.	विनय पाठ	10
4.	पूजा पीठिका	12
5.	श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजन	13
6.	मंगलाचरण	21
7.	द्रव्यसंग्रह पूजन	22
8.	अर्घ्यावली	25
9.	जयमाला	40
10.	महाऽर्घ्य	44
11.	शान्तिपाठ/विसर्जन	45
12.	द्रव्यसंग्रह भक्ति	47

प्रकाशकीय

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल को गद्य लेखन पर तो महारत हासिल है ही, पद्य लेखन में भी कोई उनका सानी नहीं है। पश्चात्ताप खण्डकाव्य व वैराग्य जैसे महाकाव्यों की रचना के उपरान्त दिगम्बर जैन समाज के सर्वमान्य आचार्य कुन्दकुन्दप्रणीत पंचपरमागमों पर समयसार महामण्डल विधान, प्रवचनसार महामण्डल विधान, नियमसार महामण्डल विधान, अष्टपाहुड़ महामण्डल विधान एवं योगसार महामण्डल विधान लिखकर आपने यह सिद्ध भी कर दिया है। इन विधानों में प्राकृत की मूल गाथाओं एवं इनकी टीका में समागत कलशों का रसास्वादन भी पाठकों ने अन्तर्मन से किया।

इसी शृंखला में अब आपने द्रव्यसंग्रह महामण्डल विधान को अपनी लेखनी का विषय बनाया है, निश्चित ही पूर्व विधानों की भांति इस कृति का समुचित समादर होगा।

आपकी महत्वपूर्ण कृतियाँ धर्म के दशलक्षण, क्रमबद्धपर्याय, बारह भावना : एक अनुशीलन, परमभावप्रकाशक नयचक्र, चैतन्यचमत्कार, निमित्तोपादान, पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, शाश्वत तीर्थधाम : सम्मेदशिखर, शाकाहार : जैनदर्शन के परिप्रेक्ष्य में, आत्मा ही है शरण और गोम्मटेश्वर बाहुबली : एक नया चिन्तन आदि प्रमुख हैं।

अब तक आपके साहित्य पर तीन छात्रों ने शोधकार्य किया है – जिनमें डॉ. महावीरप्रसाद जैन ने 'डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल : व्यक्तित्व और कर्तृत्व' विषय पर और डॉ. सीमा जैन ने 'डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के साहित्य का समालोचनात्मक अनुशीलन' विषय पर मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय उदयपुर से तथा डॉ. राजेन्द्र संगवे द्वारा मद्रास विश्वविद्यालय से 'डॉ. हुकमचंद भारिल्ल की गद्य विधाओं में जैनदर्शन' विषय पर पी-एचडी की उपाधि प्राप्त की है।

इसके साथ ही अरुणकुमार जैन ने 'डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल और उनका कथा साहित्य', नीतू चौधरी द्वारा 'शिक्षा शास्त्री परिप्रेक्ष्य में डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के शैक्षिक विचारों का समीक्षात्मक अध्ययन', ममता गुप्ता द्वारा 'धर्म के दशलक्षण : एक अनुशीलन' तथा शिखरचन्द जैन ने 'डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व' विषय पर लघु शोध प्रबन्ध लिखे हैं जो आपके साहित्यिक अवदान के जीवन्त दस्तावेज हैं।

समयसार विधान, प्रवचनसार विधान, नियमसार विधान व अष्टपाहुड़ विधान के पश्चात् पंचास्तिकाय विधान भी आपकी लेखनी के विषय बनें – हम ऐसी आशा करते हैं।

आप स्वस्थ रहें, दीर्घायु को प्राप्त हों और नित नूतन सृजन कर हम सबका इसी प्रकार मार्ग प्रशस्त करते रहें – यही पवित्र भावना है।

इस विधान में उत्थानिका व मंत्र बनाने तथा प्रूफ रीडिंग का कार्य पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील ने श्रमपूर्वक किया है। आपके उक्त कार्य में अच्युतकान्त शास्त्री का भी महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा है। अतः हम आप दोनों के आभारी हैं।

सुन्दर टाईप सैटिंग के लिए श्री कैलाशचन्द शर्मा तथा आकर्षक मुखपृष्ठ और प्रकाशन के लिए श्री अखिल बंसल को भी धन्यवाद देते हैं।

हमें विश्वास है कि इस विधान के निमित्त से यह विधान करने वाले को द्रव्यसंग्रह की विषयवस्तु का सहज ही स्वाध्याय होगा।

वे इसमें वर्णित अपनी शुद्धात्मा का स्वरूप समझकर उसके आश्रय से अपना मोक्षमार्ग प्रशस्त करें – इसी मंगल भावना के साथ विराम लेता हूँ।

३ दिसम्बर २०१८ ई. **– ब्र. यशपाल जैन,** प्रकाशन मंत्री

ग्रन्थ एवं ग्रन्थकार

– अच्युतकान्त शास्त्री

तत्त्वार्थसूत्र के रचयिता आचार्य गृद्धपिच्छ उमास्वामी की तरह ही द्रव्यसंग्रह के रचयिता मुनिश्री नेमिचन्द्रसिद्धान्तिदेव ने भी कम से कम लिखकर अधिक से अधिक प्रसिद्धि पाई है।

जैनदर्शन के प्रारंभिक ज्ञान के लिये जितनी आवश्यकता तत्त्वार्थसूत्र ग्रन्थ के अध्ययन की है; उतनी ही आवश्यकता इस द्रव्यसंग्रह ग्रन्थ की भी है, इसीलिये आज जो सम्मान और आदर तत्त्वार्थसूत्र ग्रन्थ को प्राप्त है, वही द्रव्यसंग्रह ग्रन्थ को भी प्राप्त है।

प्रायः गोम्मटसार के रचियता श्री नेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्ती और द्रव्यसंग्रह के रचयिता श्री नेमिचन्द्रसिद्धान्तिदेव को एक ही मान लिया जाता है; परन्तु आज प्राप्त प्रमाणों के आधार पर इनमें नाम की समानता होने पर भी उपाधि, पद तथा कालादि का भेद स्पष्ट समझ में आता है। इसी विषय को संक्षेप में हम निम्न चार्ट के आधार पर समझ सकते हैं –

	श्री नेमिचन्द्रसिद्धान्तचक्रवर्ती	**श्री नेमिचन्द्रसिद्धान्तिदेव**
उपाधि	सिद्धान्तचक्रवर्ती[१]	सिद्धान्तिदेव[२]
पद	आचार्य	मुनिराज
काल	११ शताब्दी का पूर्वार्द्ध	१२ शताब्दी का पूर्वार्द्ध
रचनायें	गोम्मटसार, त्रिलोकसार, लब्धिसार, क्षपणासार	बृहद्द्रव्यसंग्रह, लघुद्रव्यसंग्रह
रचना के निमित्त	सेनापति चामुण्डराय	राजश्रेष्ठी सोम
गुरु	अभयनन्दि[३]	नयनन्दि[४]
लेखन क्षेत्र	दक्षिण भारत	उत्तर भारत (मालवा)

१. गोम्मटसार कर्मकाण्ड गाथा ३९७ २. बृहद्द्रव्यसंग्रह टीका (ग्रन्थ परिचय)

३. तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा, खण्ड-२, पृ.-४१९

४. श्री दरबारीलाल कोठिया द्वारा सम्पादित द्रव्यंसग्रह, प्रस्तावना

द्रव्यसंग्रह के रचियता नेमिचन्द्रसिद्धान्तिदेव मुनि थे, आचार्य नहीं – इस बात का स्पष्टीकरण बृहद्द्रव्यसंग्रह की अन्तिम गाथा से ही हो जाता है –

(गाथा)

दव्वसंगहमिणं मुणिणाहा दोससंचयचुदा सुदुपुण्णा।
सोधयंतु तणुसुत्तधरेण णेमिचंदमुणिणा भणियं जं।।५८।।

(हरिगीत)

अल्प श्रुतधर नेमिचंद मुनि द्रव्यसंग्रह संग्रही।
अब दोषविरहित पूर्णश्रुतधर साधु संशोधन करें।।५८।।

अल्पज्ञान के धारक श्री नेमिचन्द्र मुनि ने, जो यह द्रव्यसंग्रह नामक ग्रन्थ कहा है, वह दोषों के समूह से रहित और श्रुतज्ञान में पूर्ण ऐसे मुनियों के स्वामी (आचार्य) शुद्ध करें।

यहाँ एक बात ध्यान देने योग्य यह भी है कि जहाँ एक ओर गोम्मटसार के कर्त्ता गोम्मटसार कर्मकाण्ड गाथा ३९७ में स्वयं को ''सिद्धान्तचक्रवर्ती'' होने की घोषणा करते हैं वहीं दूसरी ओर द्रव्यसंग्रह के कर्त्ता द्रव्यसंग्रह की गाथा ५८ में स्वयं को ''तनुसूत्रधर'' होने की बात कहते हैं। सिद्धान्तचक्रवर्ती और तनुसूत्रधर होना अथवा कहना – ये दोनों ही बातें आपस में विरोध को प्राप्त होती हैं, जो कि दोनों ग्रन्थकर्त्ता की भिन्नता को ही सिद्ध करती है।

श्री नेमिचन्द्रसिद्धान्तिदेव द्वारा रचित अध्यात्म ग्रन्थ द्रव्यसंग्रह में कुल ५८ गाथायें हैं, जिन्हें टीकाकार श्री ब्रह्मदेव ने विषयवस्तु के आधार पर तीन अधिकारों में विभक्त किया है।

पहले षड्द्रव्य–पंचास्तिकाय अधिकार में इष्टदेव के नमस्कारपूर्वक नयविभाग के द्वारा जीव का स्वरूप समझाने के बाद अजीव के स्वरूप के अन्तर्गत पुद्गल–धर्म–अधर्म–आकाश और काल का स्वरूप समझाकर अंत में पंचास्तिकाय का स्वरूप समझाया है।

दूसरे सप्ततत्त्व–नवपदार्थ अधिकार में द्रव्य और भाव अपेक्षा से आस्रव–बंध–संवर–निर्जरा और मोक्ष तत्त्व का स्वरूप बताकर अन्त में पुण्य–पाप रूप पदार्थों का वर्णन आया है।

तीसरे मोक्षमार्ग अधिकार में निश्चय तथा व्यवहार मोक्षमार्ग का स्वरूप तथा सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का स्वरूप बताकर इनकी प्राप्ति में उपायभूत ध्यान का स्वरूप समझाते हैं।

द्रव्यसंग्रह को अगर **लघुपंचास्तिकाय या पंचास्तिकाय का सार** भी कहें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी, क्योंकि द्रव्यसंग्रह और पंचास्तिकायसंग्रह का तुलनात्मक अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि पंचास्तिकाय की शैली और विषयवस्तु को ही द्रव्यसंग्रहकार ने अपनाया है। जैसे - पंचास्तिकाय और द्रव्यसंग्रह दोनों में ही द्रव्यों का, नौ पदार्थों का और व्यवहार एवं निश्चयमोक्षमार्ग का वर्णन आया है। यद्यपि पंचास्तिकाय ग्रन्थ में सत्ता, द्रव्य, गुण, पर्यायादि की विस्तृत दार्शनिक चर्चायें भी हैं, जो इस द्रव्यसंग्रह ग्रन्थ का विषय नहीं है।

कुछ विद्वान 'द्रव्यसंग्रह' ग्रन्थ को मूलग्रन्थ न मानकर एक संग्रह ग्रन्थ मानते हैं और जिसका कारण है - इसके नाम में जुड़ा संग्रह शब्द। परन्तु द्रव्यसंग्रह को संग्रह ग्रन्थ कहना उचित प्रतीत नहीं होता है; क्योंकि इसके टीकाकार श्रीब्रह्मदेव ने टीका प्रारंभ करने से पूर्व ग्रन्थ परिचय देते हुये ये स्पष्ट शब्दों में कहा कि इस ग्रन्थ की रचना सोमनामक राजश्रेष्ठी के निमित्त से हुई है। ध्यान रहे! टीकाकार ने यहाँ मूल संस्कृत में भी विरचित शब्द ही डाला है नाकि संग्रह शब्द -

''पश्चाद्विशेषतत्त्वपरिज्ञानार्थं विरचितस्य बृहद्द्रव्यसंग्रह-स्याधिकारशुद्धिपूर्वकत्वेन व्याख्या वृत्तिः प्रारभ्यते।''

एक बात यह भी है कि अगर ये ग्रन्थ संग्रह ग्रन्थ होता तो इसके विषय में वह निरन्तरता नहीं होती, जोकि अभी विद्यमान है। संग्रहीत किये गये छन्दों में एक गाथा और दूसरी गाथा के बीच में सम्बन्ध होना लगभग असंभव है।

द्रव्यसंग्रह ग्रन्थ पंचास्तिकायसंग्रह का ही लघु रूप है अतः शायद यह भी हो सकता है कि श्री नेमिचन्द्रमुनि ने उसके नाम से ही मिलता-जुलता हुआ नाम रखने के लिये अपने ग्रन्थ का नाम द्रव्यसंग्रह रखा हो। जो भी रहा हो पर द्रव्यसंग्रह को पूर्णतः संग्रह ग्रन्थ मानना किसी भी रूप में उचित प्रतीत नहीं होता है। प्रस्तुत विधान के माध्यम से हम सभी लोग द्रव्यसंग्रह में वर्णित द्रव्य-तत्त्व-पदार्थादि का स्वरूप समझकर मोक्षमार्ग में अग्रसर हों - इसी भावना के साथ विराम लेता हूँ। ●

प्रक्षाल पाठ

(दोहा)

भक्तिभाव से हम करें जिन प्रतिमा प्रक्षाल।
अरे विकारी भाव का हो जावे प्रक्षाल।। १ ।।

दिन का शुभ आरंभ हो चित्त रहे निर्भ्रान्त[1]।
प्रतिमा के प्रक्षाल से मन हो जावे शान्त।। २ ।।

(हरिगीतिका)

यद्यपि इस काल में अरहंत जिन उपलब्ध ना।
किन्तु हमारे भाग्य से जिनबिंब तो उपलब्ध हैं।।
जिनबिंब का प्रक्षाल पूजन और दर्शन भाव से।
जो भाग्यशाली करें प्रतिदिन भाव से अति चाव से।। ३ ।।

वे भाग्यशाली भव्य निज हित कार्य में नित रत रहें।
आपके गुणगान वे नित निरन्तर करते रहें।।
निज आतमा को जानकर वे शीघ्र ही भव पार हों।
निज आतमा का ध्यान धर वे भवजलधि से पार हों।। ४ ।।

जिसतरह समव-शरण में अरहंत जिन विद्यमान हैं।
और उनका इस जगत में उच्चतम स्थान है।।
व्यवहार होता जिसतरह का अरे उनके सामने।
बस उसतरह की विनय हो जिनमूर्तियों के सामने।। ५ ।।

---

१. जिसमें कोई सन्देह या भ्रम न हो।

यदि मूर्तियाँ हों प्रतिष्ठित स्थापना निक्षेप से।
अरहंत सम ही पूज्य हैं जिनमार्ग में व्यवहार से।।
अरे कृत्रिम-अकृत्रिम जिनबिंब जितने लोक में।
वे पूज्य हैं शत इन्द्र कर जिनशास्त्र के आलोक में।। ६ ।।

अति विनयपूर्वक बिंब का प्रक्षाल होना चाहिये।
अर दिवस में प्रत्येक दिन इकबार होना चाहिये।।
स्वस्थ तन-मन स्वच्छ पट अर सावधानी पूर्वक।
सद्भाव से ही पुरुष को प्रक्षाल करना चाहिये।। ७ ।।

प्रत्येक नर-नारी अरे पूजन करे प्रत्येक दिन।
प्रक्षाल तो बस एक जन इकबार ही दिन में करे।।
प्रक्षाल पूजन अंग ना प्रत्येक को अनिवार्य ना।
प्रक्षाल तो इक बिंब का इक बार होना चाहिये।। ८ ।।

छवि वीतरागी शान्त मुद्रा कही है जिनदेव की।
जिनमूर्ति की भी शान्त मुद्रा वीतरागी छवि कही।।
'जिनमूर्तियाँ हों मुस्कुराती' - कभी हो सकता नहीं।
और हंसना वीतरागी भाव हो सकता नहीं।। ९ ।।

जब वीतरागी जिनवरों का न्हवन हो सकता नहीं।
एवं दिगम्बर मुनिवरों का न्हवन हो सकता नहीं।।
जब मुनिवरों के मूलगुण में एक गुण अस्नान है।
तब प्रतिष्ठित मूर्तियों का न्हवन होवे किस तरह?।। १० ।।

बस इसलिये जिनमूर्तियों को स्वच्छ रखने के लिये।
और अपनी भावना को व्यक्त करने के लिये।।
अरे प्रासुक नीर से प्रक्षाल करना चाहिये।
न्हवन ना अभिषेक ना प्रक्षाल होना चाहिये।। ११ ।।

जिनबिंब का स्पर्श महिला वर्ग कर सकता नहीं।
जिनबिंब का प्रक्षाल महिला वर्ग कर सकता नहीं।।
दिगम्बर जिनबिंब से सम्पूर्ण महिला वर्ग को।
एक सीमा तक सुनिश्चित दूर रहना चाहिये।। १२ ।।

क्योंकि ये जिनबिंब जिनवरदेव के प्रतिबिंब हैं।
वीतरागी सर्वज्ञानी देव के ही बिंब हैं।।
उन बिंब का जिनबिंब का अति हर्ष से उल्लास से।
प्रक्षाल सब जन कर रहे अत्यन्त निर्मल भाव से।। १३ ।।

जिनबिंब का प्रक्षाल जो जन करें निर्मलभाव से।
और पूजन करें प्रतिदिन भाव से अति चाव से।।
जिन शास्त्र का स्वाध्याय एवं रहें संयमभाव से।
वे भव्यजन भवपार होंगे स्वयं के आधार से।। १४ ।।

(दोहा)

महाभाग्य हमने किया जिन प्रतिमा प्रक्षाल।
चरणों में जिनबिंब के सदा नवावें भाल।। १५ ।।

भक्तिभाव से जो करें जिन प्रतिमा प्रक्षाल।
निज आतम का ध्यान धर वे होवें भव पार।। १६ ।।

विनय पाठ

(दोहा)

अरहंतों को नमन कर नमूँ सिद्ध भगवान।
आचारज उवझाय अर सर्व साधु गुणखान।। १ ।।

मोक्ष मोक्ष के मार्ग में विद्यमान जो जीव।
यथायोग्य नम कर प्रभो वन्दन करूँ सदीव।। २ ।।

चौबीसों जिनराज की दिव्यध्वनि अनुसार।
ज्ञानिजनों ने जो लिखी वाणी विविधप्रकार।। ३ ।।

नय–प्रमाण से विविधविध कही तत्त्व की बात।
भविकजनों के लिये जो एकमात्र आधार।। ४ ।।

सब द्रव्यों के सभी गुण अर सामान्य–विशेष।
आज सभी को सहज ही हैं उपलब्ध अशेष।। ५ ।।

जिनवाणी उपलब्ध है उसे बतावनहार।
बहुत अधिक दुर्लभ नहीं उसके जाननहार।। ६ ।।

मोहनींद में जो पड़े नहीं कोई आधार।
साधर्मीजन कम नहीं उन्हें जगावनहार।। ७ ।।

सारा जग बेचेत है मोहनींद के द्वार।
किन्तु हमें उपलब्ध हैं मार्ग बतावनहार।। ८ ।।

महाभाग्य से प्राप्त हो देव–गुरु संयोग।
पर जिनवाणी मात की शरण सहज संयोग।। ९ ।।

उसके अध्ययन मनन से चिन्तन से निजतत्व।
जाना जाता सहज ही होता है सम्यक्त्व।। १० ।।

जिनवाणी के मर्म को अरे जानने योग्य।
ज्ञान प्रगट पर्याय में होवे सहज संयोग[१]।। ११ ।।

और कषायें मन्द हों भाव रहें निष्काम।
एक आतमा में लगे छोड़ हजारों काम[२]।। १२ ।।

देव–गुरु संयोग या जिनवाणी के योग।
तत्व श्रवण में मन लगे और न मन में रोग[३]।। १३ ।।

अरे क्षयोपशम विशुद्धि और देशना लब्धि।
जिसके ये तीनों बने उसे तत्त्व उपलब्धि।। १४ ।।

आतम में अति अधिक रुचि जब होवे सर्वांग।
विशेष तरह की योग्यता वह लब्धि प्रायोग्य।। १५ ।।

आतम का उपयोग जब आतम में रमजाय।
करणलब्धि है आतमा आतम माँहि समाय।। १६ ।।

करणलब्धि के अन्त में आतम अनुभव होय।
सम्यग्दर्शन प्राप्त हो मन रोमांचित होय।। १७ ।।

तीर्थंकर चौबीस ही हमें जगावनहार।
जागें आतम में लगें हो जावें भव पार।। १८ ।।

देव–शास्त्र–गुरु की कृपा से कटता संसार।
नमन करूँ इन सभी को भगवन् बारंबार।। १९ ।।

अरे हमारा आतमा आतम में रम जाय।
अन्य न कोई चाह मन आतम माहि समाय।। २० ।।

---

१. क्षयोपशम लब्धि २. विशुद्धि लब्धि ३. देशना लब्धि

पूजा पीठिका

ॐ जय जय जय! नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु।

(वीर)

अरहंतों को सब सिद्धों को आचार्यों को करूँ प्रणाम।
उपाध्याय एवं त्रिलोक के सर्व साधुओं को अभिराम।। १ ।।

ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः पुष्पांजलि क्षिपामि।

अरे चार मंगल हैं जग में अर्हत सिद्ध साहु मंगल।
और केवली कथित जगत में होता परम धरम मंगल।। २ ।।

और चार ही लोकोत्तम अर्हत सिद्ध साहु उत्तम।
और केवली कथित जगत में होता परम धरम उत्तम।। ३ ।।

अरे चार की शरणा जाऊँ अर्हत सिद्ध साहु शरणा।
और केवली कथित लोक में जाऊँ परम धरम शरणा।। ४ ।।

(हरिगीत)

परमेष्ठी सम शुद्धात्मा भी शरण है इस लोक में।
है परम मंगल परम उत्तम शरण भी इस लोक में।।
व्यवहार से परमेष्ठी परमार्थ से शुद्धात्मा।
की शरण में नित हम रहें जिनमार्ग के आलोक में।। ५ ।।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा पुष्पांजलि क्षिपामि।

मंगल विधान

(वीर)

हो अपवित्र-पवित्र और सुस्थित हो अथवा दुःस्थित हो।
सब पापों से छूट जाय वह णमोकार को ध्यावे जो।। १ ।।

हो अपवित्र-पवित्र अधिक क्या किसी अवस्था में भी हो।
अन्दर-बाहर से पवित्र निज परमातम को ध्यावे जो।। २ ।।

अपराजित यह मंत्र सभी विघ्नों का परमविनाशक है।
सभी मंगलों में मंगल यह पावन पहला मंगल है।। ३ ।।

सब पापों का नाशक है यह महामंत्र मंगलमय है।
सभी मंगलों में यह अद्भुत पावन पहला मंगल है।। ४ ।।

'अर्हं' ये अक्षर परमेष्ठी परमब्रह्म के वाचक हैं।
सिद्धचक्र के बीज मनोहर नमस्कार हम करते हैं।। ५ ।।

अष्टकर्म से रहित मोक्षलक्ष्मी के सुखद निकेतन हैं।
सम्यक्त्वादि अष्टगुणों से सहित सिद्ध को नमते हैं।। ६ ।।

जिनवर की स्तुति करने से विघ्न विलय हो जाते हैं।
भूत डाकिनी एवं विषभय सभी विघ्न टर जाते हैं।। ७ ।।

(पुष्पांजलि क्षिपेत्)

जिनसहस्रनाम अर्घ्य

(वीर)

जल चन्दन अक्षत सुमन चरु, अर दीप धूप फल द्रव्यमयी।
अर्घ्य समर्पण करता हूँ मैं श्रीजिनवर आनन्दमयी।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनसहस्रनामेभ्योर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजा प्रतिज्ञा पाठ

(वीर)

अनन्तचतुष्टय पद के धारी स्याद्वाद के नायक की।
पूजन करता नमस्कार कर तीन लोक परमेश्वर की।।
मूलसंघ के सम्यग्दृष्टि उनके सत्कर्मों के हेतु।
मेरे द्वारा कही जा रही यह जैनेन्द्रयज्ञविधि सेतु।। १ ।।

जिनपुंगव त्रैलोक्य गुरु की स्वस्ति हो कल्याणमयी।
जिनका रे सुस्थित स्वभाव महिमामय है कल्याणमयी।।
सहज प्रकाशमयी दृगज्योति मंगल मंगलदाता है।
स्वस्ति मंगल अद्भुत वैभव अति आनन्द प्रदाता है।। २ ।।

रे स्वभाव–परभाव सभी को करे प्रकाशित निर्मल ज्ञान।
अमृतमय वह ज्ञान मनोहर उछले अन्तर महिमावान।।
तीन लोक अर तीनकाल में विस्तृत है अति व्यापक है।
तीन लोक एवं त्रिकाल की पर्यायों का ज्ञायक है।। ३ ।।

यथायोग्य है द्रव्य शुद्धि पर भावशुद्धि पूरी चाहूँ।
अरे विविध आलंबन लेकर शुद्धभाव को अपनाऊँ।।
जो सचमुच भूतार्थ पुरुष हैं पावन हैं अतिपावन हैं।
उनकी पूजा करूँ ध्यान से जो अति ही मनभावन हैं।। ४ ।।

जिनकी केवलज्ञान ज्योति में सभी भाव भासित होते।
वे अर्हन् पुराण पुरुषोत्तम परम भाव भावित होते।।
उनकी केवलज्ञान बह्नि में मैं अपने पूरे मन से।
सभी पुण्य अर्पित करता हूँ निकला चाहूँ भव वन से।। ५ ।।

ॐ यज्ञप्रतिज्ञायै प्रतिमाग्रे पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

स्वस्ति मंगल पाठ

(चौपाई)

स्वस्ति श्री श्री ऋषभ जिनेश, स्वस्ति करें जिनवर अजितेश।
संभव करें असंभव द्वेष, अभिनन्दन दुख हरें अशेष।। १ ।।
सुमति प्रदाता सुमति जिनेश, पद्मप्रभ जिनवर पद्मेश।
जय सुपार्श्व पारस सम जान, चन्द्रप्रभ जिन चन्द्र समान।। २ ।।

सुविधिनाथ विधिनाशनहार, शीतल शीतलता दातार।
जय श्रेयांश श्रेय करतार, वासुपूज्य शिवसुख दातार।। ३ ।।

विमल विमल जीवन दातार, श्री अनन्त आनन्द अपार।
धर्म कहें संसार असार, शान्ति अनन्त शान्ति दातार।। ४ ।।

कुन्थु कुन्थु के रक्षणहार, अरजिन आनन्द के अवतार।
जीता है मन मल्लि जिनेश, मुनिसुव्रत व्रत धरें अशेष।। ५ ।।

नमि चरणों में नमें नरेश, जीता मन्मथ नेमि जिनेश।
पारस पारस से दातार, वीर अहिंसा के अवतार।। ६ ।।

(दोहा)

चौबीसों जिनराज ही मंगल मंगल हेतु।
स्वस्ति स्वरूप विराजहीं सबको मंगल देतु।। ७ ।।

(पुष्पांजलि क्षिपेत्)

परमर्षि स्वस्ति मंगल पाठ

(हरिगीत)

ज्ञानी तपस्वी मुनिवरों को ऋद्धियाँ उपलब्ध हों।
पर ऋद्धियों की सिद्धियों पर रंच न वे मुग्ध हों।।
वे तो निरन्तर लीन रहते आतमा के ज्ञान में।
आतमा के चिन्तवन निज आतमा के ध्यान में।। १ ।।

अरे चौसठ ऋद्धियों में प्रथम केवलज्ञान है।
दूसरी है मनःपर्यय तृतीय अवधीज्ञान है।।
इत्यादि चौसठ ऋद्धियाँ सब ज्ञान का विस्तार है।
रे ज्ञान के विस्तार का न आर है न पार है।। २ ।।

अन्य लौकिक सिद्धियाँ भी ऋद्धियों से प्राप्त हो।
पर मुनिवरों को उन सभी से नहीं कोई राग हो।।
वे तो स्वयं में जम गये वे तो स्वयं में रम गये।
सारे जगत से विमुख हो सद्ज्ञान में परिणम गये।। ३ ।।

आतमा के चिन्तवन में आतमा के ज्ञान में।
वे तो निरन्तर लगे रहते आतमा के ध्यान में।।
कैसे कहें उन मुनिवरों से तुम बताओ हे प्रभो।
निज आतमा को छोड़कर हे प्रभो हम पर ध्यान दो।। ४ ।।

नहीं कोई किसी का कुछ भी करे इस लोक में।
यह जानते हैं सभी आगम ज्ञान के आलोक में।।
सब जानते हैं समझते व्यवहार में यों बह रहे।
उन ऋद्धिधारी ऋषिवरों से प्रभो फिर भी कह रहे।। ५ ।।

रे ऋद्धिधारी मुनिवरो! कल्याण सब जग का करो।
अज्ञान मोहित जगत की दुर्गति मुनिवर परिहरो।।
यह जगत मिथ्यामार्ग तज सन्मार्ग में वर्तन करे।
जिनशास्त्र का स्वाध्याय कर निजज्ञान का मार्जन करे।। ६ ।।

अन्याय और अनीति छोड़े अभक्ष्य भक्षण न करे।
न्याय एवं नीति से सन्मार्ग पर आगे बढ़े।।
होवे अहिंसक आचरण आहार और विहार में।
सावधानी रखें हम व्यवहार में व्यापार में।। ७ ।।

(दोहा)

सभी संत मंगलमयी मंगल के आधार।
मल गाले मंगल करें करें मंगलाचार।। ८ ।।
सभी ऋद्धियों के धनी सभी दिगम्बर संत।
और कछु नहिं चाहिये चाहे भव का अंत।। ९ ।।

इति परमर्षि स्वस्तिमंगलविधानं पुष्पांजलि क्षिपेत्)

-●-

देव–शास्त्र–गुरु पूजन

(दोहा)

शुद्धब्रह्म परमात्मा, शब्दब्रह्म जिनवाणि।
शुद्धातम साधकदशा, नमौं जोड़ जुगपाणि।।

ॐ ह्रीं श्री देव–शास्त्र–गुरुसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री देव–शास्त्र–गुरुसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री देव–शास्त्र–गुरुसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(वीर)

आशा की प्यास बुझाने को, अबतक मृगतृष्णा में भटका।
जल समझ विषय–विष भोगों को, उनकी ममता में था अटका।।
लख सौम्यदृष्टि तेरी प्रभुवर, समता–रस पीने आया हूँ।
इस जल ने प्यास बुझाई ना, इसको लौटाने लाया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव–शास्त्र–गुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधानल से जब जला हृदय, चन्दन ने कोई न काम किया।
तन को तो शान्त किया इसने, मन को न मगर आराम दिया।।
संसार–ताप से तप्त हृदय, सन्ताप मिटाने आया हूँ।
चरणों में चन्दन अर्पण कर, शीतलता पाने आया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव–शास्त्र–गुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिमान किया अबतक जड़ पर, अक्षयनिधि को ना पहचाना।
मैं जड़ का हूँ जड़ मेरा है, यह सोच बना था मस्ताना।।
क्षत में विश्वास किया अबतक, अक्षत को प्रभुवर ना जाना।
अभिमान की आन मिटाने को, अक्षयनिधि तुम को पहिचाना।।

ॐ ह्रीं श्री देव–शास्त्र–गुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

दिन–रात वासना में रहकर, मेरे मन ने प्रभु सुख माना।
पुरुषत्व गँवाया पर प्रभुवर, उसके छल को ना पहिचाना।।
माया ने डाला जाल प्रथम, कामुकता ने फिर बाँध लिया।
उसका प्रमाण यह पुष्प–बाण, लाकर के प्रभुवर भेंट किया।।

ॐ ह्रीं श्री देव–शास्त्र–गुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पर पुद्गल का भक्षण करके, यह भूख मिटानी चाही थी।
इस नागिन से बचने को प्रभु, हर चीज बनाकर खाई थी।।
मिष्टान्न अनेक बनाये थे, दिन–रात भखे न मिटी प्रभुवर।
अब संयम–भाव जगाने को, लाया हूँ ये सब थाली भर।।

ॐ ह्रीं श्री देव–शास्त्र–गुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पहले अज्ञान मिटाने को, दीपक था जग में उजियाला।
उससे न हुआ कुछ तब युग ने, बिजली का बल्ब जला डाला।।
प्रभु भेद–ज्ञान की आँख न थी, क्या कर सकती थी यह ज्वाला।
यह ज्ञान है कि अज्ञान कहो, तुमको भी दीप दिखा डाला।।

ॐ ह्रीं श्री देव–शास्त्र–गुरुभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ–कर्म कमाऊँ सुख होगा, अबतक मैंने यह माना था।
पाप कर्म को त्याग पुण्य को, चाह रहा अपनाना था।।
किन्तु समझ कर शत्रु कर्म को, आज जलाने आया हूँ।
लेकर दशांग यह धूप, कर्म की धूम उड़ाने आया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव–शास्त्र–गुरुभ्योः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

भोगों को अमृतफल जाना, विषयों में निश–दिन मस्त रहा।
उनके संग्रह में हे प्रभुवर! मैं व्यस्त–त्रस्त–अभ्यस्त रहा।।
शुद्धात्मप्रभा जो अनुपम फल, मैं उसे खोजने आया हूँ।
प्रभु सरस सुवासित ये जड़फल, मैं तुम्हें चढ़ाने लाया हूँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव–शास्त्र–गुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुमूल्य जगत का वैभव यह, क्या हमको सुखी बना सकता।
अरे पूर्णता पाने में, इसकी क्या है आवश्यकता।।
मैं स्वयं पूर्ण हूँ अपने में, प्रभु है अनर्घ्य मेरी माया।
बहुमूल्य द्रव्यमय अर्घ्य लिये, अर्पण के हेतु चला आया।।

ॐ ह्रीं श्री देव–शास्त्र–गुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

समयसार जिनदेव हैं, जिन–प्रवचन जिनवाणि।
नियमसार निर्ग्रन्थ गुरु, करें कर्म की हानि।।

(वीरछन्द)

हे वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, तुमको ना अबतक पहिचाना।
अतएव पड़ रहे हैं प्रभुवर, चौरासी के चक्कर खाना।।
करुणानिधि तुमको समझ नाथ, भगवान भरोसे पड़ा रहा।
भरपूर सुखी कर दोगे तुम, यह सोचे सन्मुख खड़ा रहा।।
तुम वीतराग हो लीन स्वयं में, कभी न मैंने यह जाना।
तुम हो निरीह जग से कृत–कृत, इतना ना मैंने पहिचाना।।
प्रभु वीतराग की वाणी में, जैसा जो तत्त्व दिखाया है।
जो होना है सो निश्चित है, केवलज्ञानी ने गाया है।।
उस पर तो श्रद्धा ला न सका, परिवर्तन का अभिमान किया।
बनकर पर का कर्त्ता अब तक, सत् का न प्रभो सम्मान किया।।
भगवान तुम्हारी वाणी में, जैसा जो तत्त्व दिखाया है।
स्याद्वाद–नय, अनेकान्त–मय, समयसार समझाया है।।
उस पर तो ध्यान दिया न प्रभो, विकथा में समय गँवाया है।
शुद्धात्म–रुचि न हुई मन में, ना मन को उधर लगाया है।।

मैं समझ न पाया था अबतक, जिनवाणी किसको कहते हैं।
प्रभु वीतराग की वाणी में, कैसे क्या तत्त्व निकलते हैं।।
राग धर्ममय धर्म रागमय, अबतक ऐसा जाना था।
शुभ-कर्म कमाते सुख होगा, बस अबतक ऐसा माना था।।
पर आज समझ में आया है, कि वीतरागता धर्म अहा।
राग-भाव में धर्म मानना, जिनमत में मिथ्यात्व कहा।।
वीतरागता की पोषक ही, जिनवाणी कहलाती है।
यह है मुक्ति का मार्ग निरन्तर, हम को जो दिखलाती है।।
उस वाणी के अन्तर्तम को, जिन गुरुओं ने पहिचाना है।
उन गुरुवर्यों के चरणों में, मस्तक बस हमें झुकाना है।।
दिन-रात आत्मा का चिन्तन, मृदु सम्भाषण में वही कथन।
निर्वस्त्र दिगम्बर काया से भी, प्रकट हो रहा अन्तर्मन।।
निर्ग्रन्थ दिगम्बर सद्ज्ञानी, स्वातम में सदा विचरते जो।
ज्ञानी-ध्यानी-समरससानी, द्वादश विधि तप नित करते जो।।
चलते-फिरते सिद्धों-से गुरु चरणों में शीश झुकाते हैं।
हम चलें आपके कदमों पर, नित यही भावना भाते हैं।।
हो नमस्कार शुद्धातम को, हो नमस्कार जिनवर वाणी।
हो नमस्कार उन गुरुओं को, जिनकी चर्या समरससानी।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

(दोहा)

दर्शन दाता देव हैं, आगम सम्यग्ज्ञान।
गुरु चारित्र की खान हैं, मैं वंदौं धरि ध्यान।।

(इति पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

द्रव्यसंग्रह महामण्डल पूजन विधान

मंगलाचरण

(हरिगीत)

जिस आतमा[१] के ज्ञान से निज आतमा का ज्ञान हो।
जिस आतमा के ध्यान से सुख परम[२] केवलज्ञान हो।।
उस त्रिकाली ज्ञानमय ध्रुवधाम आतमराम को।
अत्यन्त निर्मलभाव से मम नमन बारंबार हो ।। १ ।।

वीतरागी सर्वज्ञानी हितंकर जिनदेव को।
जिन दिव्यध्वनि में समागत रे मृदुल जिनवर वचन को।।
जिनमार्ग में आरूढ़ गुरुजन के चरण-आचरण को।
अत्यन्त भक्तिभाव से अति विनयपूर्वक नमन हो।। २ ।।

निज आत्म के श्रद्धान दर्शन ज्ञान पूर्वक ध्यानमय।
जो चरण है आचरण है वह एक मुक्तिमार्ग है।।
उस मुक्तिमग में चरण जिनके मुक्तिमग के वे पथिक।
हम नेह पूर्वक उन सभी को योग्य अभिवादन करें।। ३ ।।

(दोहा)

इसप्रकार इस लोक में जो मुक्ति के पंथ।
में चलते हों चाव से वे सब हैं अभिवंद्य।। ४ ।।

---

१. परमशुद्धनिश्चयनय का विषयभूत, पर और पर्याय से भिन्न आत्मा।

२. परमसुख-अतीन्द्रिय आनन्द।

द्रव्यसंग्रह पूजन

स्थापना

(वीर)

नेमिचन्द्र सिद्धान्तिदेव की लघुतम कृति अति पावन है।
इसमें द्रव्य–तत्त्व प्रतिपादन मनहर है मनभावन है।।
सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चरण का प्रतिपादन मनमोहक है।
और ध्यान का प्रतिपादन भी मोहक है अति प्रेरक है।। १ ।।
प्राकृत भाषा की यह रचना सब से अधिक पढ़ी जाती।
सब नर–नारी इसको पढ़ते सबके मन यह बस जाती।।
जैनधर्म की मूल भावना का परिचय हो जाता है।
जिनदर्शन का तत्त्वज्ञान लगभग इसमें आ जाता है।। २ ।।

(दोहा)

यह रचना जिनधर्म की अनुपम कृति बेजोड़।
इसमें आया तत्त्व सब इसकी कोई न होड़।। ३ ।।

ॐ ह्रीं श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागम! अत्र अवतर-अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागम!! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ, ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीद्रव्यसंग्रहाजिनागम!!! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट्।

(इति पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

(वीर)

जल

यह उज्ज्वल जल शीतल पावन प्यास बुझाने वाला है।
लेकिन इससे जनम–मरण का नाश न होनेवाला है।।
द्रव्य तत्त्व अर रत्नत्रय का प्रतिपादक यह ग्रन्थ महान।
इसमें किया गया है इनका विविधरूप बहुविध व्याख्यान।। १ ।।

ॐ ह्रीं श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

चन्दन

ताप मिटाता शीतल चंदन अरे भयंकर गर्मी का।
पर भव का आताप मिटे ना इससे इस जगतीतल का।।
द्रव्य तत्त्व अर रत्नत्रय का प्रतिपादक यह ग्रन्थ महान।
इसमें किया गया है इनका विविधरूप बहुविध व्याख्यान।। २ ।।

ॐ ह्रीं श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अक्षत

हैं अखण्डता के प्रतीक ये अक्षत अक्षत अविनाशी।
इनको अर्पण कर मैं पाऊँ क्षत ाविहीन पद अविनाशी।।
द्रव्य तत्त्व अर रत्नत्रय का प्रतिपादक यह ग्रन्थ महान।
इसमें किया गया है इनका विविधरूप बहुविध व्याख्यान।। ३ ।।

ॐ ह्रीं श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

पुष्प

परम सुगंधित पुष्पों से जगजन कामुक हो जाते हैं।
काम वासनाओं को किन्तु शमन नहीं कर पाते हैं।।
द्रव्य तत्त्व अर रत्नत्रय का प्रतिपादक यह ग्रन्थ महान।
इसमें किया गया है इनका विविधरूप बहुविध व्याख्यान।। ४ ।।

ॐ ह्रीं श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

नैवेद्य

क्षुधा वेदना उत्तेजक चरु क्षुधा शमन कर सकती है।
किन्तु सदा के लिए क्षुधा का हरण नहीं कर सकती है।।
द्रव्य तत्त्व अर रत्नत्रय का प्रतिपादक यह ग्रन्थ महान।
इसमें किया गया है इनका विविधरूप बहुविध व्याख्यान।। ५ ।।

ॐ ह्रीं श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

दीप

अपनी सीमा में अन्धकार का नाश दीप कर सकता है।
पर असीम नभवासी[१] भ्रमतम आतम ही हर सकता है।।
द्रव्य तत्त्व अर रत्नत्रय का प्रतिपादक यह ग्रन्थ महान।
इसमें किया गया है इनका विविधरूप बहुविध व्याख्यान।। ६ ।।

ॐ ह्रीं श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

धूप

यदि अग्निशिखा में धूप जले जगभर को धूमिल कर सकती।
पर भले जले यह धूप किन्तु कर्मों को भस्म नहीं करती।।
द्रव्य तत्त्व अर रत्नत्रय का प्रतिपादक यह ग्रन्थ महान।
इसमें किया गया है इनका विविधरूप बहुविध व्याख्यान।। ७ ।।

ॐ ह्रीं श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

फल

अरे शुभाशुभभाव जगत में स्वर्ग-नरक में फलते हैं।
परमशुद्धपरिणाम जगत में मोक्षफलों में फलते हैं।।
द्रव्य तत्त्व अर रत्नत्रय का प्रतिपादक यह ग्रन्थ महान।
इसमें किया गया है इनका विविधरूप बहुविध व्याख्यान।। ८ ।।

ॐ ह्रीं श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

अर्घ्य

बेशकीमती मूल्य चुकावें बेशकीमती वस्तु मिले।
किन्तु आतमा के अनुभव बिन रे अनर्घ्य पद नहीं मिले।।
द्रव्य तत्त्व अर रत्नत्रय का प्रतिपादक यह ग्रन्थ महान।
इसमें किया गया है इनका विविधरूप बहुविध व्याख्यान।। ९ ।।

ॐ ह्रीं श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय अनर्घ्यपदप्राप्तयेऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

---

१. नभ = लोक-अलोकरूप आकाश

अर्घ्यावली

१. षड्द्रव्य-पंचास्तिकाय अधिकार

(इस विधान की अर्घ्यावली में सर्वत्र नेमिचन्द्रसिद्धान्तिदेव की गाथाओं का डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल कृत पद्यानुवाद दिया गया है।)

(दोहा)

द्रव्यसंग्रह शास्त्र की पूजन की सानन्द।
अब अर्घ्यावलि में सुनो मूलग्रन्थ के छन्द।।

।। इति पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।।

अब, सर्वप्रथम मंगलाचरण में इष्टदेव को नमस्कार करते हैं –

(हरिगीत)

कहे जीव अजीव जिन जिनवर वृषभ ने लोक में।
वे वंद्य सुरपति वृन्द मैं वंदन करूँ कर जोरकर।। १ ।।

ॐ ह्रीं मंगलस्वरूप श्रीजिनवरवृषभेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।। १ ।।

अब, जीव के नौ अधिकार बताते हैं –

(हरिगीत)

जीव कर्त्ता भोक्ता अर अमूर्तिक उपयोगमय।
अर सिद्ध भवगत देहमित निजभाव से ही ऊर्ध्वगत।। २।।

ॐ ह्रीं जीवनवाधिकारप्ररूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं नि. स्वाहा ।। २ ।।

(गाथा)

जीवमजीवं दव्वं जिणवरवसहेण जेण णिद्दिट्ठं।
देविंदविंदवंदं वंदे तं सव्वदा सिरसा।। १ ।।
जीवो उवओगमओ अमुत्ति कत्ता सदेहपरिमाणो।
भोत्ता संसारत्थो सिद्धो सो विस्ससोड्ढगई।। २ ।।

अब, निश्चय-व्यवहार से जीव का स्वरूप बताते हैं -

(हरिगीत)

जो सदा धारें श्वाँस इन्द्रिय आयु बल व्यवहार से।
वे जीव निश्चयजीव वे जिनके रहे नित चेतना।। ३।।

ॐ ह्रीं निश्चयव्यवहारजीवस्वरूपनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। ३।।

अब, उपयोग के भेद-प्रभेद बताते हैं -

(हरिगीत)

उपयोग दो हैं ज्ञान-दर्शन चार दर्शन जानिये।
चक्षु अचक्षु अवधि केवल नाम से पहिचानिये।। ४।।

ज्ञान आठ मतिश्रुतावधि ज्ञान भी कुज्ञान भी।
मनःपर्यय और केवल प्रत्यक्ष और परोक्ष भी।। ५।।

सामान्यतः चऊ-आठ दर्शन-ज्ञान जिय लक्षण कहे।
व्यवहार से पर शुद्धनय से शुद्धदर्शन-ज्ञान हैं।।६।।

ॐ ह्रीं उपयोगभेदप्रभेदप्ररूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। ४।।

(गाथा)

तिक्काले चदुपाणा इंदियबलमाउ आणपाणो य।
ववहारा सो जीवो णिच्चयणायदो दु चेदणा जस्स।। ३।।
उवओगो दुवियप्पो दंसण णाणं च दंसणं चदुधा।
चक्खु अचक्खू ओही दंसणमध केवलं णेयं।। ४।।
णाणं अट्ठवियप्पं मदिसुदओही अणाणणाणाणि।
मणपज्जयकेवलमवि पच्चक्खपरोक्खभेयं च।। ५।।
अट्ठचदुणाणदंसण सामण्णं जीवलक्खणं भणियं।
ववहारा सुद्धणया सुद्धं पुण दंसणं णाणं।। ६।।

अब, निश्चयनय से जीव अमूर्तिक हैं तथा व्यवहारनय से मूर्तिक – ऐसा बताते हैं – (हरिगीत)

स्पर्श रस गंध वर्ण जिय में नहीं हैं परमार्थ से।
अतः जीव अमूर्त मूर्तिक बंध से व्यवहार से ।। ७ ।।

ॐ ह्रीं नयविभागेन-जीवस्यमूर्तिकामूर्तिकत्वनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।। ५।।

अब, नयविभाग के द्वारा आत्मा का कर्त्तृत्व और भोक्तृत्व बताते हैं –

(हरिगीत)

चिद्कर्मकर्त्ता नियत से द्रवकर्म का व्यवहार से।
शुधभाव का कर्त्ता कहा है आतमा परमार्थ से ।। ८ ।।
कर्मफल सुख-दुक्ख भोगे जीव नयव्यवहार से।
किन्तु चेतनभाव को भोगे सदा परमार्थ से ।। ९ ।।

ॐ ह्रीं नयविभागेन आत्मनः कर्त्तृत्वभोक्तृत्वप्ररूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।। ६।।

अब, नयविभाग द्वारा आत्मा का आकार बताते हैं –

(हरिगीत)

समुद्घात विन तनमापमय संकोच से विस्तार से।
व्यवहार से यह जीव असंख्य प्रदेशमय परमार्थ से।। १० ।।

ॐ ह्रीं नयविभागेन आत्माकारनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।। ७।।

(गाथा)

वण्ण रस पंच गंधा दो फासा अट्ठ णिच्चया जीवे।
णो संति अमुत्ति तदो ववहारा मुत्ति बंधादो ।। ७ ।।
पुग्गलकम्मादीणं कत्ता ववहारदो दु णिच्चयदो।
चेदणकम्माणादा सुद्धणया सुद्धभावाणं ।। ८ ।।
ववहारा सुहदुक्खं पुग्गलकम्मप्फलं पंभुजेदि।
आदा णिच्चयणयदो चेदणभावं खु आदस्स ।। ९ ।।
अणुगुरुदेहपमाणो उवसंहारसप्पदो चेदा।
असमुहदो ववहारा णिच्चयणयदो असंखदेसो वा ।। १० ।।

अब, संसारी जीवों का स्वरूप कहते हैं –

(हरिगीत)

भूजलानलवनस्पति अर वायु थावर जीव हैं।
दो इन्द्रियों से पाँच तक शंखादि सब त्रस जीव हैं।। ११।।
पंचेन्द्रियी संज्ञी–असंज्ञी शेष सब असंज्ञि ही हैं।
एकेन्द्रियी हैं सूक्ष्म–बादर पर्याप्तकेतर सभी हैं।। १२।।
भवलीन जिय विध चतुर्दश गुणथान मार्गणथान से।
अशुद्धनय से कहे हैं पर शुद्धनय से शुद्ध हैं।। १३।।

ॐ ह्रीं संसारीजीवनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। ८।।

अब, मुक्त जीव का स्वरूप बताते हैं –

(हरिगीत)

उत्पादव्ययसंयुक्त अन्तिम देह से कुछ न्यून हैं।
लोकाग्रथित निष्कर्म शाश्वत अष्टगुणमय सिद्ध हैं।। १४।।

ॐ ह्रीं मुक्तजीवस्वरूपप्ररूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। ९।।

(गाथा)

पुढविजलतेयवाउ वणप्फदी विविहथावरेइंदी।
विगतिगचदुपंचक्खा तसजीवा होंति संखादी।। ११।।
समणा अमणा णेया पंचेंदिय णिम्मणा परे सव्वे।
बाहरसुहुमेइंदी सव्वे पज्जत्त इदरा य।। १२।।
मग्गणगुणठाणेहि य चउदसहिं हवंति तह असुद्धणया।
विण्णेया संसारी सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया।। १३।।
णिक्कम्मा अट्ठगुणा किंचूणा चरमदेहदो सिद्धा।
लोयग्गठिदा णिच्चा उप्पादवयेहिं संजुत्ता।। १४।।

अब, अजीव द्रव्य का स्वरूप बताते हैं –

(हरिगीत)

मूर्त पुद्गल किन्तु धर्माधर्मनभ अर काल भी।
मूर्तिक नहीं हैं तथापि ये सभी द्रव्य अजीव हैं।। १५।।

ॐ ह्रीं अजीवद्रव्यस्वरूपनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं नि. ।। १०।।

अब, पुद्गल द्रव्य की विभावव्यंजनपर्याय का स्वरूप बताते हैं –

(हरिगीत)

थूल सूक्षम बंध तम संस्थान आतप भेद अर।
उद्योत छाया शब्द पुद्गलद्रव्य के परिणाम हैं।। १६।।

ॐ ह्रीं पुद्गलद्रव्यपर्यायप्ररूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं नि. ।। ११।।

अब, धर्म द्रव्य का स्वरूप बताते हैं –

(हरिगीत)

स्वयं चलती मीन को जल निमित्त होता जिसतरह।
चलते हुए जिय–पुद्गलों को धरमदरव उसीतरह।। १७।।

ॐ ह्रीं धर्मद्रव्यस्वरूपनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं नि.. ।। १२।।

अब, अधर्म द्रव्य का स्वरूप बताते हैं –

(हरिगीत)

छाया निमित्त ज्यों गमनपूर्वक स्वयं ठहरे पथिक को।
अधरम त्यों ठहरने में निमित्त पुद्गल–जीव को।। १८।।

ॐ ह्रीं अधर्मद्रव्यप्ररूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं नि. स्वाहा।। १३।।

(गाथा)

अज्जीवो पुण णेओ पुग्गल धम्मो अधम्म आयासं।
कालो पुग्गल मुत्तो रूवादिगुणो अमुत्ति सेसा दु।। १५।।
सद्दो बंधो सुहुमो थूलो संठाण भेद तम छाया।
उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया।। १६।।
गइपरिणयाण धम्मो पुग्गलजीवाण गमणसहयारी।
तो यं जह मच्छाणं अच्छंता णेव सो णेई।। १७।।
ठाणजुदाण अधम्मो पुग्गलजीवाण ठाणसहयारी।
छाया जह पहियाणं गच्छंता णेव सो धरई।। १८।।

अब, आकाश द्रव्य का स्वरूप व भेद बताते हैं –

(हरिगीत)

आकाश वह जीवादि को अवकाश देने योग्य जो।
आकाश के दो भेद हैं जो लोक और अलोक हैं।। १९।।

काल धर्माधर्म जिय पुद्गल रहें जिस क्षेत्र में।
वह क्षेत्र ही बस लोक है अवशेष क्षेत्र अलोक है।। २०।।

ॐ ह्रीं आकाशद्रव्यस्य स्वरूप-भेदनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। १४।।

अब, कालद्रव्य के भेदपूर्वक उसका स्वरूप बताते हैं –

(हरिगीत)

परीवर्तनरूप परिणामादि लक्षित काल जो।
व्यवहार वह परमार्थ तो बस वर्तनामय जानिये।। २१।।

जानलो इस लोक के जो एक-एक प्रदेश पर।
रत्नराशिवत् जड़े वे असंख्य कालाणु दरव।। २२।।

ॐ ह्रीं कालद्रव्यस्य भेदपूर्वकस्वरूपनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। १५।।

(गाथा)

अवगासदाणजोग्गं जीवादीणं वियाण आयासं।
जेण्हं लोगागासं अल्लोगागासमिदि दुविहं।। १९।।
धम्माधम्मा कालो पुग्गलजीवा य संति जावदिये।
आयासे सो लोगो तत्तो परदो अलोगुत्तो।। २०।।
दव्वपरिवट्टरूवो जो सो कालो हवेइ ववहारो।
परिणामादीलक्खो वट्टणलक्खो य परमट्ठो।। २१।।
लोयायासपदेसे इक्केक्के जे ठिया हु इक्केक्का।
रयणाणं रासी इव ते कालाणू असंखदव्वाणि।। २२।।

अब, छह द्रव्यों के स्वरूप का उपसंहार करके, पाँच अस्तिकाय को जानने की प्रेरणा देते हैं –

(हरिगीत)

इसतरह ये छह दरब जो जीव और अजीवमय।
कालबिन बाकी दरव ही पंच अस्तिकाय हैं।। २३।।

ॐ ह्रीं पंचास्तिकायनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। १६।।

अब, अस्तिकाय का स्वरूप बताते हैं –

(हरिगीत)

कायवत बहुप्रदेशी हैं इसलिए तो काय हैं।
अस्तित्वमय हैं इसलिए अस्ति कहा जिनदेव ने।। २४।।

ॐ ह्रीं अस्तिकायस्वरूपनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। १७।।

अब, किस द्रव्य के कितने प्रदेश हैं, यह बताते हैं –

(हरिगीत)

हैं अनंत प्रदेश नभ जिय धर्म अधर्म असंख्य हैं।
सब पुद्गलों के त्रिविध एवं काल का बस एक है।। २५।।

ॐ ह्रीं द्रव्यप्रदेशसंख्यानिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। १८।।

(गाथा)

एवं छब्भेयमिदं जीवाजीवप्पभेददो दव्वं।
उत्तं कालविजुत्तं णायव्वा पंच अत्थिकाया दु।। २३।।
संति जदो तेणेदे अत्थीति भणंति जिणवरा जम्हा।
काया इव बहुदेसा तम्हा काया य अत्थिकाया य।। २४।।
होंति असंखा जीवे धम्माधम्मे अणंत आयासे।
मुत्ते तिविह पदेसा कालस्सेगो ण तेण सो काओ।। २५।।

अब, पुद्गल परमाणु को उपचार से कायत्व है, यह बताते हैं –

(हरिगीत)

यद्यपि पुद्गल अणु है मात्र एक प्रदेशमय।
पर बहुप्रदेशी कहें जिन स्कन्ध के उपचार से।। २६ ।।

ॐ ह्रीं पुद्गलपरमाणोःउपचारकायत्वनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। १९।।

अब, प्रदेश का लक्षण कहते हैं –

(हरिगीत)

एक अणु जितनी जगह घेरे प्रदेश कहें उसे।
किन्तु एक प्रदेश में ही अनेक परमाणु रहें।। २७ ।।

ॐ ह्रीं प्रदेशलक्षणनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। २०।।

२. सप्ततत्त्व–नवपदार्थ अधिकार

अब, जीव–अजीव के विशेषों को संक्षेप में कहने की प्रतिज्ञा करते हैं –

(हरिगीत)

बंध आस्रव पुण्य–पापरु मोक्ष संवर निर्जरा।
विशेष जीव अजीव के संक्षेप में उनको कहें।। २८ ।।

ॐ ह्रीं जीवाजीवविशेषनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं नि. स्वाहा।। २१।।

(गाथा)

एयपदेसो वि अणू णाणाखंधप्पदेसदो होदि।
बहुदेसो उवयारा तेण य काओ भणंति सव्वण्हु।। २६ ।।
जावदियं आयासं अविभागीपुग्गलाणुउट्टद्धं।
तं खु पदेसं जाणे सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं।। २७ ।।
आसवबंधणसंवरणिज्जरमोक्खो सपुण्णपावा जे।
जीवाजीवविसेसा तेवि समासेण पभणामो।। २८ ।।

अब, भावास्रव और द्रव्यास्रव का स्वरूप बताते हैं –

(हरिगीत)

कर्म आना द्रव्य आस्रव जीव के जिस भाव से।
हो कर्म आस्रव भाव वे ही भाव आस्रव जानिये।। २९।।

मिथ्यात्व–अविरति पाँच–पाँचरु पंचदश परमाद हैं।
त्रय योग चार कषाय ये सब आस्रवों के भेद हैं।। ३०।।

ज्ञानावरण आदिक करम के योग्य पुद्गल आगमन।
है द्रव्य आस्रव विविधविध जो कहा जिनवर देव ने।। ३१।।

ॐ ह्रीं भाव–द्रव्यास्रवनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। २२।।

अब, बंध का स्वरूप और भेद बताते हैं –

(हरिगीत)

जिस भाव से हो कर्मबंधन भावबंध है भाव वह।
द्रवबंध बंधन प्रदेशों का आतमा अर कर्म के।। ३२।।

बंध चार प्रकार प्रकृति प्रदेश थिति अनुभाग ये।
योग से प्रकृति प्रदेश अनुभाग थिती कषाय से।। ३३।।

ॐ ह्रीं बंधस्यस्वरूपभेदनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं नि.।। २३।।

(गाथा)

आसवादि जेण कम्मं परिणामेणप्पणो स विण्णेओ।
भावासवो जिणुत्तो कम्मासवणं परो होदि।। २९।।
मिच्छत्ताविरदिपमादजोगकोहादओऽथ विण्णेया।
पण पण पणदह तिय चदु कमसो भेदा दु पुव्वस्स।। ३०।।
णाणावरणादीणं जोग्गं जं पुग्गलं समासवदि।
दव्वासवो स णेओ अणेयभेयो जिणक्खादो।। ३१।।
बज्झदि कम्मं जेण दु चेदणभावेण भावबंधो सो।
कम्मादपदेसाणं अण्णोण्णपवेसणं इदरो।। ३२।।
पयडिट्ठिअणुभागप्पदेसभेदा दु चदुविधो बंधो।
जोगा पयडिपदेसा ठिदिअणुभागा कसायदो होंति।। ३३।।

अब, भाव-द्रव्य संवर का स्वरूप बताते हैं -

(हरिगीत)

कर्म रुकना द्रव्यसंवर और उसके हेतु जो।
शुद्धातमा के भाव वे ही भावसंवर जानिये।। ३४।।

व्रत समिति गुप्ती धर्म परिषहजय तथा अनुप्रेक्षा।
चारित्र भेद अनेक वे सब भावसंवररूप हैं।। ३५।।

ॐ ह्रीं भाव-द्रव्यसंवरप्ररूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं नि.।। २४।।

अब, भाव-द्रव्य निर्जरा का स्वरूप बताते हैं -

(हरिगीत)

द्रवनिर्जरा है कर्म झरना और उसके हेतु जो।
तपरूप निर्मल भाव वे ही भावनिर्जर जानिये।। ३६।।

ॐ ह्रीं भाव-द्रव्यनिर्जराप्ररूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। २५।।

अब, भाव-द्रव्य मोक्ष का स्वरूप बताते हैं -

(हरिगीत)

भावमुक्ती कर्मक्षय के हेतु निर्मलभाव हैं।
अर द्रव्यमुक्ती कर्मरज से मुक्त होना जानिये।। ३७।।

ॐ ह्रीं भाव-द्रव्यमोक्षनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। २६।।

(गाथा)

चेदणपरिणामो जो कम्मस्सासवणिरोहणे हेऊ।
सो भावसंवरो खलु दव्वासवरोहणो अण्णो।। ३४।।
वद[१]समिदिगुत्तिओ धम्माणुपिहा परीसहजओ य।
चारित्तं बहुभेयं[२] णायव्वा भावसंवरविसेसा।। ३५।।
जहकालेण तवेण य भुत्तरसं कम्मपुग्गलं जेण।
भावेण सडदि णेया तस्सडणं चेदि णिज्जरा दुविहा।। ३६।।
सव्वस्स कम्मणो जो खयहेदू अप्पणो हु परिणामो।
णेओ स भावमोक्खो दव्वविमोक्खो य कम्मपुधभावो।। ३७।।

अब, पुण्य-पापरूप दो पदार्थों का स्वरूप बताते हैं -

(हरिगीत)

शुभाशुभपरिणामयुत जिय पुण-पाप सातावेदनी।
शुभ आयु नामरु गोत्र पुण अवशेष तो सब पाप हैं।। ३८।।

ॐ ह्रीं पुण्यपापरूपपदार्थनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। २७।।

३. मोक्षमार्ग अधिकार

अब, व्यवहार और निश्चयमोक्षमार्ग का स्वरूप समझाते हैं -

(हरिगीत)

सम्यग्दरशसद्ज्ञानचारित्र मुक्तिमग व्यवहार से।
इन तीन मय शुद्धातमा है मुक्तिमग परमार्थ से।। ३९।।

ॐ ह्रीं निश्चय-व्यवहारमोक्षमार्गप्ररूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। २८।।

अब, रत्नत्रयमयी आत्मा ही मोक्ष का कारण है, यह बताते हैं -

(हरिगीत)

आतमा से भिन्न द्रव्यों में रहें न रतनत्रय।
बस इसलिए ही रतनत्रयमय आतमा ही मुक्तिमग।। ४०।।

ॐ ह्रीं रत्नत्रयमयात्मनःमोक्षकारणत्वप्ररूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। २९।।

(गाथा)

सुहअसुहभावजुत्ता पुण्णं पावं हवंति खलु जीवा।
सादं सुहाउ णामं गोदं पुण्णं पराणि पावं च।। ३८।।
सम्मद्दंसणं णाणं चरणं मोक्खस्स कारणं जाणे।
ववहारा णिच्चयदो तत्तियमइओ णिओ अप्पा।। ३९।।
रयणत्तयं ण वट्टइ अप्पाणं मुयत्तु अण्णदवियम्हि।
तह्मा तत्तियमइओ होदि हु मोक्खस्स कारणं आदा।। ४०।।

अब, सम्यग्दर्शन का स्वरूप बताते हैं –

(हरिगीत)

जीवादि का श्रद्धान समकित जो कि आत्मस्वरूप है।
और दुरभिनिवेश विरहित ज्ञान सम्यग्ज्ञान है ।। ४१ ।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनस्वरूपनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। ३०।।

अब,सम्यग्ज्ञान का स्वरूप बताते हैं –

(हरिगीत)

संशयविमोहविभरमविरहित स्वपर को जो जानता।
साकार सम्यग्ज्ञान है वह है अनेकप्रकार का ।। ४२ ।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानस्वरूपप्ररूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। ३१।।

अब, दर्शन का स्वरूप बताते हैं –

(हरिगीत)

अर्थग्राहक निर्विकल्पक और है अविशेष जो।
सामान्य अवलोकन करे जो उसे दर्शन जानना ।। ४३ ।।

ॐ ह्रीं दर्शनोपयोगस्वरूपप्रतिपादक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। ३२।।

(गाथा)

जीवादीसद्दहणं सम्मत्तं रूवमप्पणो तं तु।
दुरभिणिवेसविमुक्कं णाणं सम्मं खु होदि सदि जम्हि ।। ४१ ।।
संशयविमोहविब्भमविवज्जियं अप्पपरसरूवस्स।
गहणं सम्मं णाणं सायारमणेयभेयं च ।। ४२ ।।
जं सामण्णं गहणं भावाणं णेव कट्टुमायारं।
अविसेसिदूण अट्ठे दंसणमिदि भण्णए समये ।। ४३ ।।

अब, दर्शन तथा ज्ञान के उत्पत्तिक्रम को बताते हैं –

(हरिगीत)

जिनवर कहें छद्मस्थ के हो ज्ञान दर्शनपूर्वक।
पर केवली के साथ हों दोनों सदा यह जानिये।। ४४।।

ॐ ह्रीं दर्शन-ज्ञानोत्पत्तिक्रमनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं नि.।। ३३।।

अब, व्यवहार चारित्र एवं निश्चयचारित्र का स्वरूप बताते हैं –

(हरिगीत)

अशुभ से विनिवृत्त हो व्रत समितिगुप्तिरूप में।
शुभभावमय हो प्रवृत्ती व्यवहार चारित्र जिन कहें।। ४५।।
बाह्य अंतर क्रिया के अवरोध से जो भाव हों।
संसारनाशक भाव वे परमार्थ चारित्र जानिये।। ४६।।

ॐ ह्रीं निश्चय-व्यवहार चारित्रस्वरूपप्रतिपादक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। ३४।।

अब, ध्यान करने की प्रेरणा देते हैं –

(हरिगीत)

अरे दोनों मुक्तिमग बस ध्यान में ही प्राप्त हो।
इसलिए चित्तप्रसन्न से नित करो ध्यानाभ्यास तुम।। ४७।।

ॐ ह्रीं ध्यानप्रेरक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। ३५।।

(गाथा)

दंसणपुव्वं णाणं छदमत्थाणं ण दुण्णि उवओगा।
जुगवं जह्मा केवलिणाहे जुगवं तु ते दोवि।। ४४।।
असुहादो विणिवित्ती सुहे पवित्ती य जाण चारित्तं।
वदसमिदिगुत्तिरूवं ववहारणया दु जिणभणियं।। ४५।।
बहिरब्भंतरकिरियारोहो भवकारणप्पणासट्ठं।
णाणिस्स जं जिणुत्तं तं परमं सम्मचारित्तं।। ४६।।
दुविहंपि मोक्खहेउं झाणे पाउणदि जं मुणी णियमा।
तह्मा पयत्तचित्ता जूयं झाणं समब्भसह।। ४७।।

अब, ध्याता का लक्षण बताते हैं –

(हरिगीत)

यदि कामना है निर्विकल्पक ध्यान में हो चित्त थिर।
तो मोह–राग–द्वेष इष्टानिष्ट में तुम ना करो।। ४८।।

ॐ ह्रीं ध्यातालक्षणनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं नि. स्वाहा।। ३६।।

अब, पदस्थ ध्यान करने की प्रेरणा देते हैं –

(हरिगीत)

परमेष्ठीवाचक एक दो छह चार सोलह पाँच अर।
पैंतीस अक्षर जपो नित अर अन्य गुरु उपदेश से।। ४९।।

ॐ ह्रीं पदस्थध्यानप्रेरक श्री द्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं नि. स्वाहा।। ३७।।

अब, पंच परमेष्ठी का स्वरूप बताते हुये उनके ध्यान करने की प्रेरणा देते हैं –

(हरिगीत)

नाशकर चऊ घाति दर्शन ज्ञान सुख अर वीर्यमय।
शुभदेहथित अरिहंत जिन का नित्यप्रति चिन्तन करो।। ५०।।
लोकाग्रथित निर्देह लोकालोक ज्ञायक आतमा।
अठकर्मनाशक सिद्धप्रभु का ध्यान तुम नित ही करो।। ५१।।

(गाथा)

मा मुज्झह मा रज्जह मा दुस्सह इट्ठणिट्ठअत्थेसु।
थिरमिच्छह जइ चित्तं विचित्तझाणप्पसिद्धीए।। ४८।।
पणतीस सोल छप्पय चदु दुगमेगं च जवह झाएह।
परमेट्ठिवाचयाणं अण्णं च गुरूवएसेण।। ४९।।
णट्ठचदुघाइकम्मो दंसणसुहणाणवीरियमईओ।
सुहदेहत्थो अप्पा सुद्धो अरिहो विचिंतिज्जो।। ५०।।
णट्ठट्ठकम्मदेहो लोयालोयस्स जाणओ दट्ठा।
पुरिसायारो अप्पा सिद्धो झाएह लोयसिहरत्थो।। ५१।।

ज्ञान-दर्शन-वीर्य-तप एवं चरित्राचार में।
जो जोड़ते हैं स्वपर को ध्यावो उन्हीं आचार्य को।। ५२।।
रतनत्रय युत नित निरत जो धर्म के उपदेश में।
सब साधुजन में श्रेष्ठ श्री उवझाय को वंदन करें।। ५३।।
जो ज्ञान-दर्शनपूर्वक चारित्र की आराधना।
कर मोक्षमारग में खड़े उन साधुओं को हो नमन।। ५४।।

ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठीध्यानप्रेरक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं नि. स्वाहा।। ३८।।

अब, निश्चयध्यान का स्वरूप बताते हैं –

(हरिगीत)

निजध्येय में एकत्व निष्पृहवृत्ति धारक साधुजन।
चिन्तन करें जिस किसी का भी सभी निश्चय ध्यान है।। ५५।।

ॐ ह्रीं निश्चयध्यानस्वरूपप्रतिपादक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। ३९।।

अब, परमध्यान का स्वरूप बताते हैं –

(हरिगीत)

बोलो नहीं सोचो नहीं अर चेष्टा भी मत करो।
उत्कृष्टतम यह ध्यान है निज आतमा में रत रहो।। ५६।।

ॐ ह्रीं परमध्यानस्वरूपनिरूपक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं नि. स्वाहा।। ४०।।

(गाथा)

दंसणणाणपहाणे वीरियचारित्तवरतवायारे।
अप्पं परं च जुंजइ सो आयरियो मुणी झेओ।। ५२।।
जो रयणत्तयजुत्तो णिच्चं धम्मोवएसणे णिरदो।
सो उवझाओ अप्पा जदिवरवसहो णमो तस्स।। ५३।।
दंसणणाणसमग्गं मग्गं मोक्खस्स जो हु चारित्तं।
साधयदि णिच्चसुद्धं साहू स मुणी णमो तस्स।। ५४।।
जं किंचिवि चिंततो णिरीहवित्तो हवे जदा साहू।
लद्धूण य एयत्तं तदाहु तं तस्स णिच्चयं झाणं।। ५५।।
मा चिट्ठह मा जंपह मा चिंतह किं वि जेण होइ थिरो।
अप्पा अप्पम्मि रओ इणमेव परं हवे झाणं।। ५६।।

अब, ध्यान के लिये तप, श्रुत और व्रत में तत्पर होने की प्रेरणा देते हैं –

(हरिगीत)

व्रती तपसी श्रुताभ्यासी ध्यान में हों धुरंन्धर।
निजध्यान करने के लिए तुम करो इनकी साधना।। ५७।।

ॐ ह्रीं ध्यानार्थ तप-श्रुत-व्रतप्रेरक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं नि.।। ४१।।

अब, अन्तिम गाथा में ग्रन्थकार अपनी लघुता प्रदर्शित करते हैं –

(हरिगीत)

अल्प श्रुतधर नेमिचंद मुनि द्रव्यसंग्रह संग्रही।
अब दोषविरहित पूर्णश्रुतधर साधु संशोधन करें।। ५८।।

ॐ ह्रीं ग्रन्थकारलघुताप्रदर्शक श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।। ४२।।

जयमाला

(दोहा)

द्रव्यसंग्रह ग्रन्थ यह जिनदर्शन का मूल।
इसके अध्ययन मनन से पा जावे भवकूल।। १ ।।

(रेखता)

द्रव्यसंग्रह यह ग्रन्थ महान इसमें समझाये छह द्रव्य।
और पंचास्तिकाय का रूप बताया इसमें अमल अनूप।।
अरे समझाये हैं तत्वार्थ और फिर नवपदार्थ अधिकार।
बताया रत्नत्रय का रूप और फिर मोक्षमार्ग अधिकार।। २ ।।

(गाथा)

तवसुदवदवं चेदा झाणरहधुरंधरो हवे जम्हा।
तम्हा तत्तियणिरदा तल्लद्धीए सदा होह।। ५७ ।।
दव्वसंगहमिणं मुणिणाहा दोससंचयचुदा सुदुपुण्णा।
सोधयंतु तणुसत्तधरेण णेमिचंदमुणिणा भणियं जं।। ५८ ।।

छहों द्रव्यों का सहज स्वरूप पंच अस्तीकायों का रूप।
अरे इन सबका सार-असार बताये हैं निश्चय-व्यवहार।।
तीन बल पाँच इन्द्रियाँ आयु तथा है श्वास और उच्छ्वास।
कहे जाते हैं ये दश प्राण प्राणियों में इनका आवास।। ३ ।।

अरे कम से कम होवें चार अधिक से अधिक होय दश प्राण।
प्राणधारी संसारी जीव कहें इनको व्यवहारी जीव।।
ज्ञान-दर्शन हैं जिसके मूल चेतनामय जो आतमराम।
चेतना लक्षण आतमराम कहा जाता है निश्चय जीव।। ४ ।।

जीव से भिन्न अचेतन द्रव्य अतः कहते हैं उन्हें अजीव।
अरे पुद्गल अर धर्म अधर्म कहे हैं काल और आकाश।।
अरे रे नेक प्रदेशी द्रव्य कहे जाते हैं अस्तिकाय।
सभी है नेक प्रदेशी द्रव्य किन्तु है एक प्रदेशी काल।। ५ ।।

जिसतरह एक जीव को छोड़ और सब होते द्रव्य अजीव।
उसतरह काल द्रव्य को छोड़ और सब होते अस्तिकाय।।
अरे जिनमें होते हैं शब्द रूप रस गंध और स्पर्श।
उन्हें कहते हैं रूपी द्रव्य और वे होते इन्द्रिय ग्राह्य।। ६ ।।

स्वयं जब चलें जीव पुद्गल होय जब उनका गमनागमन।
और उसमें जो होय निमित्त अरे कहते हैं उसको धरम।।
और चलकर ठहरें वे द्रव्य ठहरने में जो होय निमित्त।
वीतरागी सर्वज्ञ महान उसे कहते हैं द्रव्य अधर्म।। ७ ।।

अरे जो सबको दे अवकाश उसे कहते हैं जिन आकाश।
और उसके भी हैं दो भेद, लोक एवं अलोक आकाश।।
जहाँ रहते हैं द्रव्य अशेष उसे कहते हैं लोकाकाश।
जहाँ होता केवल आकाश वही है अरे अलोकाकाश।। ८ ।।

आस्रव-बंध और पुण-पाप निर्जरा-संवर एवं मोक्ष।
अरे ये द्रव्य-भाव के रूप सभी होते हैं दो-दो रूप।।
इन्हें समझाने के उपरान्त मोक्षमारग के रे अनुरूप।
रतन त्रय दर्शन ज्ञान चरित्र मुक्तिमग आतम के अनुरूप।। ९ ।।

अरे निज आतम को पहिचान आतमा में अपनापन करें।
अरे अपने आतम को जान उसी में अपनेपन से जमे।।
यही है निश्चय सम्यग्दर्श यही है निश्चय सम्यग्ज्ञान।
रतन त्रय शामिल हो जाते करो यदि इक आतम का ध्यान।। १० ।।

काय चेष्टा कुछ भी मत करो और कुछ भी ना बोलो बोल।
और ना कुछ भी सोचो भाई! एक आतम में रमो अमोल।।
यही है निश्चय सम्यग्ज्ञान यही है निश्चय सम्यक् ध्यान।
यही है परम शुद्ध उपयोग यही है अद्भुत कार्य महान।। ११।।

यही है परम समाधीयोग यही है परमतत्व की लब्धि।
यही है आतम की संवित्ति यही है आतम की उपलब्धि।।
यही है परम भक्ति का भाव यही है निर्विकल्प आनन्द।
यही है परम समरसीभाव यही है परमशुद्ध आनन्द।। १२।।

यही है परम शुद्धचारित्र यही है स्वसंवेदन ज्ञान।
यही है स्वस्वरूप उपलब्धि यही है परमशुद्ध विज्ञान।।
यही है दिव्यध्वनि का सार यही है परमतत्त्व का बोध।
जगत में इसके बिन कुछ नहीं यही एकाग्र चित्त का रोध।। १३।।

यही एकाग्रचित्त का रोध यही है अपनेपन का बोध।
यही है उपयोगी उपयोग यही है योगिजनों का योग।।
इसी को कहते हैं सब लोग मिला है यह अद्भुत संयोग।
स्वयं को जानो मानो जमो यही है परमतत्त्व का बोध।। १४।।

स्वयं को जानो, जानो नहीं जानना होने दो तुम सहज।
जानने का तनाव मत करो जानते रहो निरन्तर सहज।।
अरे करने-धरने का बोझ उतारो हो जावो तुम सहज।
जानने के तनाव से रहित जानना होने दो तुम सहज।। १५।।

जानना होने दो तुम सहज जानने के विकल्प से पार।
और तुम हो जावो निर्भार भाड़ में जानो दो तुम भार।।
भाड़ में जाने दो तुम भार करो तुम अपने में निर्धार[१]।
यदि बनना चाहो भगवान उन्हीं-से हो जावो निर्भार।। १६।।

उन्हीं-से[२] हो जावो निर्भार उन्हीं-से हो जावो निर्ग्रन्थ।
चाहते हो तुम भव का अंत शीघ्र ही छोड़ो जग का पंथ।।
सहजता जीवन का आनन्द यही है परमागम का पंथ।
चलो तुम परमागम के पंथ शीघ्र आवेगा भव का अंत।। १७।।

शीघ्र आवेगा भव का अन्त प्रगट होगा आनन्द अनन्त।
ज्ञान-दर्शन भी होंगे नंत वीर्य भी होगा अरे अनन्त।।
अनन्तानन्द अनन्तानन्द अनन्तानन्द अनन्तानन्द।
अनन्तानन्द अनन्तानन्द अरे भोगोगे काल अनन्त।। १८।।

ॐ ह्रीं श्रीद्रव्यसंग्रहजिनागमाय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

महिमा आतमध्यान की जिसका आर न पार।
आतम आतम में रमे हो जावे भव पार।। १९ ।।

(इति पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

---

१. सोच समझकर निश्चित करना। २. उनके समान ही।

महाऽर्घ्य

(अडिल्ल[१])

पंच परम परमेष्ठी पूजूँ भाव से।
उनकी वाणी पूजूँ अधिक उछाह से।।
रतनत्रयमय परम शुद्ध उपयोग है।
दश धर्मों से मंडित पावन योग है।। १ ।।
गिरि कैलाश महान और पावापुरी।
सम्मेदाचल गिरनारी चम्पापुरी।।
आदि अनेकों सिद्धक्षेत्र मन भावने।
और अनेकों अतिशय क्षेत्र सुहावने।। २ ।।
तीन लोक में थान-थान अति ही घने।
कृत्रिम और अकृत्रिम चैत्यालय बने।।
इन सबकी पूजन करता हूँ चाव से।
बारह भावन भाऊँ अति उत्साह से।। ३ ।।
धर्मध्यान शुद्धोपयोग का योग है।
और परम तप स्वाध्याय संयोग है।।
यह सब चाहूँ और न कोई चाह है।
इन सबमें ही मेरा अति उत्साह है।। ४ ।।

(दोहा)

एकमात्र आराध्य है अपना ज्ञायकभाव।
उसमें तन्मय होय तो होय विभाव अभाव।। ६ ।।

ॐ ह्रीं श्री अरहंत-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-साधुपंचपरमेष्ठिभ्यो नमः सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय नमः श्री सम्मेदशिखर-गिरनारगिरि-कैलाशगिरि-चम्पापुर-पावापुर-आदि सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः अतिशयक्षेत्रेभ्यो नमः त्रिलोकसम्बन्धी कृत्रिमाकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो नमः सर्वपूज्यपदेभ्यो नमः महार्घ्यं....

---

१. अपूर्व अवसर ऐसा किस दिन आएगा? .... की धुन पर गायें।

शान्ति पाठ

(हरिगीत)

हे शान्ति के सागर जिनेश्वर! शान्ति के ही रूप हो।
नासाग्रदृष्टि शान्त मुद्रा स्वयं शान्तिस्वरूप हो।।
सारे जगत में शान्ति हो सारा जगत यह चाहता।
किन्तु सारे जगत को अपना बनाना चाहता।। १ ।।

जबकि इक अणुमात्र भी तो जगत में इसका नहीं।
अधिक क्या अणुमात्र को अपना बना सकता नहीं।।
यह बात शाश्वत सत्य है कोई किसी का रंच भी।
अच्छा-बुरा या अन्य कुछ भी कभी कर सकता नहीं।। २ ।।

मारना अर बचाना या दु:ख-सुख का दान भी।
कोई किसी का ना करे आदान और प्रदान भी।।
यह बात केवलि ने कही जिनशास्त्र में उल्लेख है।
जैन शासन में समझ लो यह छठी का लेख है।। ३ ।।

शान्ति और अशान्ति ये तो आतमा के भाव हैं।
कोई किसी के क्यों करे ये तो स्वयं के भाव हैं।।
रे स्वयं मिथ्या मान्यता को बुद्धिपूर्वक छोड़ दें।
एवं स्वयं ही स्वयं में निज आतमा को जोड़ दें।। ४ ।।

शान्ति होती प्राप्त केवल आतमा के ज्ञान से।
आतमा के ज्ञान से अर आतमा के ध्यान से।।
यह ही परम सत्यार्थ है यह ही परम भूतार्थ है।
और सब व्यवहार है बस एक यह परमार्थ है।। ५ ।।

व्यवहार से हम भावना भाते सुखी संसार हो।
सुख-शान्ति चारों ओर हो ना समृद्धि का पार हो।।
अनुकूलता हो सब तरफ न आर हो न पार हो।
अधिक क्या अब हम कहें बस सब सुखी संसार हो।। ६ ।।

(दोहा)

सभी जीव इस लोक के सुखी रहें सर्वत्र।
मौसम की अनुकूलता बनी रहे सर्वत्र ।। ७ ।।

प्राप्त करें सब जगत में निज आनन्द अपार।
निज आतम का ध्यान धर आतम शान्ति अपार।। ८।।

(नौ बार णमोकार मंत्र का जाप करें)

विसर्जन पाठ

(दोहा)

जो कुछ जैसी बन पड़ी अपनी शक्ति प्रमाण।
हमने पूजन की प्रभो अपनी भक्ति प्रमाण।। १ ।।

हमने जाना जो प्रभो जिनवाणी का मर्म।
उसके ही अनुसार सब यह व्यवहारिक धर्म।। २ ।।

इसमें जो कुछ रहीं हों कमियाँ विविध प्रकार।
विधि के जाननहार जन इसमें करें सुधार।। ३ ।।

(इति पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

द्रव्यसंग्रह भक्ति

(रेखता)

द्रव्यसंग्रह यह ग्रन्थ महान.....

छहों द्रव्यों का सहज स्वरूप पंच आस्तिकायों का रूप।
करें हम आतम की पहिचान करें निज आतम का श्रद्धान।।
द्रव्यसंग्रह यह ग्रन्थ महान..... ।। १ ।।

सात तत्त्वों का शुद्धस्वरूप तथा रे पुण्य-पाप का रूप।
करें हम तत्त्वारथ का ज्ञान करें हम तत्त्वारथ श्रद्धान।।
द्रव्यसंग्रह यह ग्रन्थ महान..... ।। २ ।।

करें हम रत्नत्रय पहिचान करें हम सम्यग्दर्शन-ज्ञान।
धरें हम चरण-आचरण शुद्ध करें हम निज आतम का ध्यान ।।
द्रव्यसंग्रह यह ग्रन्थ महान..... ।। ३ ।।

करें इसका प्रतिदिन स्वाध्याय, समझ लें द्रव्य और पर्याय।
विचारों का आदान-प्रदान करें हम नित इसके गुणगान।।
द्रव्यसंग्रह यह ग्रन्थ महान..... ।। ४ ।।

(दोहा)

द्रव्यसंग्रह ग्रन्थ की महिमा अपरंपार।
करें नित्य स्वाध्याय सब हो जावें भव पार।। ५ ।।

-●-

डॉ. भारिल्ल के महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

१. समयसार : ज्ञायकभावप्रबोधिनी टीका ५०.००
२-६. समयसार अनुशीलन भाग १ से ५ १२५.००
७. समयसार का सार ३०.००
८. गाथा समयसार १०.००
९. प्रवचनसार : ज्ञानज्ञेयतत्त्वप्रबोधिनी टीका ५०.००
१०-१२. प्रवचनसार अनुशीलन भाग १ से ३ ९५.००
१३. कुन्दकुन्द शतक अनुशीलन २०.००
१४. प्रवचनसार का सार ३०.००
१५. नियमसार : आत्मप्रबोधिनी टीका ५०.००
१६-१७. नियमसार अनुशीलन भाग १ से ३ ७०.००
१८. छहढाला का सार १५.००
१९. मोक्षमार्गप्रकाशक का सार ३०.००
२०. वैराग्य महाकाव्य २५.००
२१. समयसार महामण्डल विधान २५.००
२२. समयसार महामण्डल विधान (गाथा सहित) ३५.००
२३. प्रवचनसार महामण्डल विधान २०.००
२४. प्रवचनसार महामण्डल विधान (गाथा सहित) २०.००
२५. नियमसार महामण्डल विधान २५.००
२६. नियमसार महामण्डल विधान (गाथा सहित) ३०.००
२७. अष्टपाहुड़ महामण्डल विधान २५.००
२८.दर्शन-सूत्र-चारित्रपाहुड़ मण्डल विधान १०.००
२९. बढ़ते कदम १०.००
३०. ४७ शक्तियाँ और ४७ नय १५.००
३१. पंडित टोडरमल व्यक्तित्व और कर्तृत्व २०.००
३२. परमभावप्रकाशक नयचक्र ४०.००
३३. चिन्तन की गहराइयाँ ३०.००
३४. तीर्थंकर महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ २५.००
३५. धर्म के दशलक्षण २०.००
३६. क्रमबद्धपर्याय २०.००
३७. तत्त्वार्थमणिप्रदीप (पूर्वार्द्ध) २०.००
३८. तत्त्वार्थमणिप्रदीप (उत्तरार्द्ध) १०.००
३९. तत्त्वार्थमणिप्रदीप (सम्पूर्ण) ३०.००
४०. बिखरे मोती १६.००
४१. सत्य की खोज २५.००
४२. अध्यात्म नवनीत १५.००
४३. आप कुछ भी कहो १५.००
४४. आत्मा ही है शरण १५.००
४५. मुक्ति-सुधा १८.००
४६. बारह भावना : एक अनुशीलन १६.००
४७. दृष्टि का विषय १०.००
४८. गागर में सागर ७.००
४९. पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव १२.००
५०. णमोकार महामंत्र : एक अनुशीलन १५.००
५१. रक्षाबन्धन और दीपावली ५.००
५२. आचार्य कुंदकुंद और उनके पंचपरमागम ५.००
५३. युगपुरुष कानजीस्वामी ५.००
५४. वीतराग-विज्ञान प्रशिक्षण निर्देशिका २०.००
५५. योगसार अनुशीलन २५.००
५६. योगसार महामण्डल विधान ८.००
५७. द्रव्यसंग्रह महामण्डल विधान ७.००
५८. मैं कौन हूँ ११.००
५९. रहस्य : रहस्यपूर्ण चिट्ठी का १०.००
६०. निमित्तोपादान ८.००
६१. अहिंसा : महावीर की दृष्टि में ५.००
६२. मैं स्वयं भगवान हूँ ५.००
६३-६४. ध्यान का स्वरूप/रीति-नीति ४.००
६५. शाकाहार ५.००
६६. भगवान ऋषभदेव ४.००
६७. तीर्थंकर भगवान महावीर ३.००
६८. चैतन्य चमत्कार ४.००
६९. गोली का जवाब गाली से भी नहीं २.००
७०. गोम्मटेश्वर बाहुबली २.००
७१. वीतरागी व्यक्तित्व : भगवान महावीर २.००
७२. अनेकान्त और स्याद्वाद ३.००
७३. शाश्वत तीर्थधाम सम्मेदशिखर ६.००
७४. बिन्दु में सिन्धु २.५०
७५. जिनवरस्य नयचक्रम १०.००
७६. पश्चात्ताप खण्डकाव्य १०.००
७७. बारह भावना एवं जिनेन्द्र वंदना २.००
७८. कुंदकुंदशतक पद्यानुवाद २.५०
७९. शुद्धात्मशतक पद्यानुवाद १.००
८०. समयसार पद्यानुवाद ३.००
८१. योगसार पद्यानुवाद १.००
८२. समयसार कलश पद्यानुवाद ३.००
८३. प्रवचनसार पद्यानुवाद ३.००
८४. द्रव्यसंग्रह पद्यानुवाद १.००
८५. अष्टपाहुड़ पद्यानुवाद ३.००
८६. नियमसार पद्यानुवाद २.५०
८७. नियमसार कलश पद्यानुवाद ५.००
८८. सिद्धभक्ति १०.००
८९. अर्चना जेबी १.५०
९०. कुंदकुंदशतक (अर्थ सहित) ५.००
९१. शुद्धात्मशतक (अर्थ सहित) ५.००
९२-९३. बालबोध पाठमाला भाग २ से ३ ८.००
९४-९५. वीतराग विज्ञान पाठमाला १ से ३ १५.००
९६-९७. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग १ से २ १२.००
९८. भगवान महावीर और उनकी जन्मभूमि ३.००
९९. समाधिमरण या सल्लेखना ५.००
१००. ये है मेरी नारियाँ ५.००

डॉ. भारिल्ल पर प्रकाशित साहित्य

१. तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल (अभिनंदन ग्रंथ) १५०.००
२. डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल : व्यक्तित्व और कृतित्व - डॉ. महावीरप्रसाद जैन ३०.००
३. डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल और उनका कथा साहित्य ह्न अरुणकुमार जैन १२.००
४. डॉ. भारिल्ल के साहित्य का समीक्षात्मक अध्ययन - अखिल जैन बसल २५.००
५. गुरु की दृष्टि में शिष्य ५.००
६. मनीषियों की दृष्टि में : डॉ. भारिल्ल ५.००
७. डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के साहित्य का समालोचनात्मक अनुशीलन ह्न सीमा जैन २५.००

प्रकाशनाधीन

१. शिक्षाशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के शैक्षिक विचारों का समीक्षात्मक अध्ययन ह्न नीतू चौधरी
२. डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व ह्न शिखरचन्द जैन
३. धर्म के दशलक्षण एक अनुशीलन ह्न ममता गुप्ता